



भारत का राजपत्र

The Gazette of India

असाधारण

EXTRAORDINARY

भाग II—पार्ट 3—उप-पार्ट (ii)

PART II—Section 3—Sub-section (ii)

प्राधिकार से प्रकाशित

PUBLISHED BY AUTHORITY

सं० २३५]

नई दिल्ली, शनिवार, मई ६, १९७८/वैशाख १६, १९००

No. 235]

NEW DELHI, SATURDAY, MAY 6, 1978/VAISAKHA 16, 1900

इस भाग में प्रिय पृष्ठ संख्या वी जाती है जिससे कि यह भालग संकलन के रूप में रखा जा सके।

Separate paging is given to this Part in order that it may be filed as a separate compilation.

विधि, स्थाय और कम्पनी कार्य मंत्रालय

(विधायी विभाग)

नई दिल्ली, ६ मई, १९७८

का०मा० ३०८(अ).—केन्द्रीय सरकार, राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निवाचित भवित्वितम्, १९५२ (१९५२ का ३१) की घारा २० द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, १९७७ की निवाचित भर्जी सं० १ में भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा, १५ फरवरी, १९७८ को दिए गए आदेश को प्रकाशित करती है।

“भारत के उच्चतम न्यायालय में प्रारम्भिक भविकारिता

१९७७ की निवाचित भर्जी सं० १

चरन लाल साहू

भर्जीदार

बनाम

सी. सी.सी. संजीव रेड्डी

प्रत्यर्पी

निर्णय

मुख्य आयाविपति देश—

यह भर्जी राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति निवाचित, भवित्वितम्, १९५२ (जिसे इसमें इसके पश्चात् भवित्वितम् के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) की घारा १४ के अधीन काइल की गई है जिसमें १९ जुलाई, १९७७ को हुए राष्ट्रपतीय निवाचित में भारत के राष्ट्रपति के रूप में श्री नीलम संजीव रेड्डी के निवाचित को चुनोती दी गई है। भवित्वितम् की घारा १४ और १४-क का सुसंगत भाग निम्नलिखित रूप में है—

“१४. (१) कोई भी निवाचित उपधारा (२) में विनिर्दिष्ट प्राधिकरण को पेश भी गई तो निवाचित भर्जी द्वारा ही प्रसन्नत किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

(२) उच्चतम न्यायालय निवाचित भर्जी का विचारण करने की भविकारिता रखने वाला प्राधिकरण होगा।

(३) हर निवाचित भर्जी ऐसे प्राधिकरण को उस भाग के उपर्योगी और उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुच्छेद १४५ के अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार पेश की जाएगी।

१४-क (१) निवाचित को प्रसन्नत करने वाली भर्जी घारा १८ की उपधारा (१) में और घारा १९ में निर्दिष्ट भावारों में से एक या भविक भावारों पर ऐसे निवाचित के किसी अध्यर्थी द्वारा, या—

(१) राष्ट्रपतीय निवाचित की वशा में बीस या अधिक निवाचिकों द्वारा संकृत भर्जीदारों के रूप में”

* * *

उच्चतम न्यायालय में पेश की जा सकती।

२. इस न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों में से, भाग ७ आदेश ३९ में भवित्वितम् की घारा १४(३) में उल्लिखित भाग ३ के अधीन बनाए गए निवाचित भर्जीयों से संबंधित नियम अन्तर्विष्ट हैं। आदेश ३९ के नियम २ में निम्नलिखित भविकारित किया गया है—

“२. निवाचित को प्रसन्नत करने वाला कोई आदेश इस आदेश के उपर्योगों के अनुसार की गई और उपस्थित की गई भर्जी के द्वारा ही किया जाएगा।”

आदेश ३९ के नियम ५ में निम्नलिखित उपबन्ध किया गया है—

“५. भर्जी में भवित्वितम् के अधीन न्यायालय में भर्जी देने के लिए भर्जीदार के भविकार का कारन होगा और उसके द्वारा मार्गे गए अनुतोषों के समर्पण में उसके द्वारा भविकारित तथ्य और आवार संकेत में उपर्योग होने।”

आदेश ३९ के नियम ३४ में निम्नलिखित कहा गया है—

“३४. इस आदेश या किसी विशेष आदेश या न्यायालय के नियमों के उपर्योगों के अधीन रहते हए, किसी निवाचित भर्जी की

प्रक्रिया में यथासंभव न्यायालय की आरम्भिक प्रधिकारिता के प्रयोग में उसके समक्ष कार्यवाहियों की प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा।”

3. घट: इस न्यायालय के नियमों के भाग 3 में, जिसमें वादपत्रों द्वारा वादों के संस्थित किए जाने से संबंधित आदेश 23 भी सम्मिलित है, अन्तविष्ट प्रक्रिया “वादपत्र” के लिए “भर्जी” शब्द पढ़ने के पश्चात् निर्वाचित अधियों द्वारा प्रारम्भ की गई कार्यवाहियों को लागू होती है। इन नियमों में नियम 6 है जिसमें यह उपबन्धित है कि यह न्यायालय, रजिस्ट्रार के समक्ष वादपत्र के प्रस्तुत किए जाने और उसे संक्षिप्त किए जाने के पश्चात्, वादपत्र को उस बात में नामंजूर कर देगा “जब उसमें वाद हेतुक प्रकाट न किया गया हो” प्रथम जब “वादपत्र में किए गए कथन से वाद किसी विधि द्वारा वर्जित दिखाई देता हो”。 न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह उसे तुरत नामंजूर कर दे और यदि यह वर्जित किया गया हो कि विधि के उपबन्धों से कार्यवाहियों वर्जित हैं तो वादपत्र या भर्जी पर अधिक समय नष्ट न करे। वस्तुतः ऐसे मामले में विरोधी पक्षकार या पक्षकारों को सूचना देना भी आवश्यक नहीं है। किन्तु जहाँ भर्जीदार की भर्जी या वादपत्र नामंजूर कर दिया जाता है वहाँ आदेश 23, नियम 7 के प्रधीन यह प्रभेक्षित है कि “न्यायालय उस प्रधान का आदेश प्रभिलिखित करेगा जिसमें उस आदेश के दिए जाने के कारण भी होंगे।”

4. आदेश 24 के अधीन समझ जारी किए जाने और तामील किए जाने तथा आदेश 25 के अधीन लिखित कथन के काल किए जाने के पश्चात् ही किसी मामले में विवादात्मक विरचित करने की आवश्यकता का प्रश्न उठता है। लेकिन यूके सूचना जारी कर दी गई थी और श्री नीलम संजीव रेड्डी ने इस मामले में जिसमें निर्वाचित भर्जी के कायम रखे जाने के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप किए गए थे और भर्जीदार ने विवादात्मक विरचित किए जाने की मांग की थी, स्वयं विरोध में शपथ एवं फाइल दिया या इसलिए इस न्यायालय ने इन प्रारम्भिक आक्षेपों पर विवादात्मक विरचित किए जो इस प्रकार है—

- (1) क्या भर्जीदार की अपनी निर्वाचित भर्जी कायम रखने के लिए सुने जाने का अधिकार है, अथवा इससे शब्दों में क्या यह राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचित अधिनियम की धारा 5-ब और 5-ग के उपबन्धों के अनुसार सम्भव्यतः नामनिर्दिष्ट अध्यर्थी है?
- (2) क्या भर्जी कायम रखे जाने योग्य है?
- (3) क्या भर्जीदार अधिनियम की धारा 5-ब और 5-ग की विधिमान्यता को चुनौती दे सकता है?
- (4) यदि ऐसा है, तो क्या विवादात्मक संघर्ष 3 में वर्णित शब्दों उपबन्ध विधिमान्य हैं?

5. लेकिन यदि भर्जीदार अपने सुने जाने के अधिकार पर प्रथम विवादात्मक के प्रक्रम से आगे नहीं बढ़ सकता तो अस्य विवादात्मकों पर विचार करना अर्थात् है। लेकिन इस मामले में ऊपर विरचित वार विवादात्मक अध्यवा विवादात्मक प्रश्न इस प्रकार अस्तरसंस्कृत है कि हम एक ही निर्णय और आदेश के माध्यम से उनका निपटारा करने की प्रस्तावना करते हैं जिसमें हम इस निष्कर्ष पर पूछताने में अपने कारणों को कथन करेंगे कि यह भर्जी विधि के उपबन्धों द्वारा वर्जित है, जिसे कि इसे इस आधार पर नामंजूर कर दिया जाना चाहिए। हमारी यह भी राय है कि भर्जीदार न सो इस अधिनियम की धारा 5-ब और 5-ग की विधिमान्यता को चुनौती दे सकता है और न ही यह उपबन्ध किसी भी प्रकार से अविधिमान्य है। भर्जीदार ने 1974 में पुरस्त्यापित मंविधानिक संशोधन की, जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद 71(1) के अधीन बनाए गए किसी अधिनियम की विधिमान्यता पर आक्षेप करने की किसी न्यायालय की अधिकारिता को वर्जित कर दिया गया था,

विधिमान्यता को चुनौती थी है। सुसंगत संविधानिक उपबन्ध और अधिनियम के उपबन्ध नीचे उपबन्धित किए गए हैं।

अनुच्छेद 54 में निम्नलिखित रूप में अधिकथित किया गया है—

“54. राष्ट्रपति का निर्वाचित—राष्ट्रपति का निर्वाचित एक ऐसे विवादात्मकों के सदस्य करेंगे जिसमें—

- (क) संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य, तथा
- (ख) राज्यों की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य, होंगे।

राष्ट्रपति का निर्वाचित अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संकलमणीय मत द्वारा गूढ़ इलाका द्वारा होगा यह संविधान के अनुच्छेद 55 में उपबन्धित है। अनुच्छेद 71 के प्रथम तीन खण्डों में निम्नलिखित अधिकथित किया गया है—

“71. राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचित से सम्बन्धित या संसकृत विषय—(1) इस संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, संसद विधि द्वारा राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचित से सम्बद्ध या संसकृत किसी विषय का विनियमन कर सकेगी जिसके असर्वत वे आधार भी हैं, जिन पर ऐसे निर्वाचित पर आपसित की जा सकेगी :

परमुक्त किसी व्यक्ति के राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के रूप में निर्वाचित पर इस आधार पर आपसित नहीं की जाएगी कि निर्वाचित करने वाले निवादात्मकों के सदस्यों में किसी भी कारण से कोई दिक्षितता वर्तमान है।

(2) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचित से उत्पन्न या संसकृत सब शंकाओं और विवादों की जांच और विनियमन ऐसे प्राधिकारी या निकाय द्वारा भी और ऐसी रीति से किया जाएगा जो खण्ड (1) में विविष्ट विधि द्वारा या उसके अधीन उपबन्धित हो।

(3) खण्ड (1) में विविष्ट विधि की मान्यता और ऐसी विधि के अधीन किसी प्राधिकारी या निकाय के विनियमन पर किसी न्यायालय में आपसि नहीं की जाएगी।”

6. संविधान के अनुच्छेद 71(1) के प्रयोगों को कार्यान्वयित करने के लिए संसद द्वारा राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचित अधिनियम, 1952 अधिनियमित किया गया था। वे आधार, जिन पर निर्वाचित को प्रश्नगत किया जा सकता है तथा उसे प्रश्नगत करने का दृग् अधिनियम द्वारा अधिकथित किए गए हैं। अधिनियम की धारा 14-क में केवल वह रीति उपबन्धित है जिसमें राष्ट्रपति के निर्वाचित को या तो किसी अस्तरीय द्वारा या बीस या अधिक निवाचिकों द्वारा संयुक्त भर्जीदारों के स्पष्ट में उच्चतम न्यायालय के समक्ष निर्वाचित भर्जी उपस्थित करके प्रश्नगत किया जा सकता है।

7. अधिनियम की धारा 13 (क) में यह कहा गया है—

“अस्तरीय” से वह व्यक्ति अभिनेत है जो निर्वाचित में अस्तरीयों के रूप में सम्बद्धतः नामनिर्दिष्ट हुआ है या सम्बद्धतः नामनिर्दिष्ट होने का दावा करता है।”

भर्जीदार ने अपने वादपत्र में यह स्वीकार किया है कि उसे अधिनियम की धारा 5-ब द्वारा, जिसमें यह प्राधिनियमित किया गया है कि प्रथेक अस्तरीय, या तो स्पष्ट या अपने प्रस्तावकों अध्यवा समर्थकों में से किसी के द्वारा, रिटार्निंग अफिसर को धारा 5 के अधीन जारी की गई लोक सूचना में विविष्ट स्थान पर, विवित प्रलैप में भरा गया नामनिर्देशन

पत्र परिषित करेगा जिस पर अध्यर्थी के नामनिर्देशन की अनुमति देते हुए हस्ताक्षर होंगे, तथा

(क) राष्ट्रपतीय निर्वाचित की दशा में कम से कम वस निर्वाचितों के प्रस्थापकों के रूप में और कम से कम दस निर्वाचितों के समर्थकों के रूप में भी हस्ताक्षर होंगे।”

इसके पश्चात् धारा 5-ग में यह उपबन्ध किया गया है कि—

“किसी अध्यर्थी को निर्वाचित के लिए तब तक सम्यक्तः नामनिर्विष्ट नहीं समझा जाएगा जब तक वह दो हजार पाँच सौ रुपये की राशि निर्वाचित नहीं करता या करता है।”

8. अब अर्जीदार ने अपने अर्जी में यह भी स्वीकार किया है कि उसने अधिनियम की धारा 5-ग द्वारा यथा अपेक्षित इस धन राशि का निशेप नहीं किया था। इस प्रकार पिंडीशन या बादपत्र में कोई स्वीकृतियों के अनुसार ही अर्जीदार न तो सम्यक्तः नामनिर्विष्ट अध्यर्थी था और वही वह ऐसा अध्यर्थी था जो इस प्रकार नामनिर्विष्ट होने का बाबा कर सके। अतएव, अधिनियम की धारा 5-ग के अधीन कार्य करते हुए रिटिनिंग अफिसर द्वारा उसका नामनिर्देशन पत्र ठीक ही नामंजूर किया गया था।

9. अब अर्जीदार की दसील यह है कि संविधान के अनुच्छेद 58 में निर्वाचित किए जाने वाले अध्यर्थी के लिए अर्हताएं अधिकथित नहीं हैं जिससे कि अनुच्छेद 71(1) के अधीन बनाई गई विधि उसके विरुद्ध नहीं हो सकती जो अनुच्छेद 58 में उपबन्धित किया गया है, अह अनुच्छेद इस प्रकार है—

“(1) कोई व्यक्ति राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र न होगा जब तक कि वह—

(क) भारत का नागरिक न हो,

(ख) पेंटीस वर्ष की आयु पूरी न कर चुका हो, तथा

(ग) लोक सभा के लिए सबस्य निर्वाचित होने की अर्हता न रखता हो।

(2) कोई व्यक्ति जो भारत सरकार के अधिन प्रथवा उक्त सरकारों में से किसी से निर्वाचित किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन कोई लाभ का पव धारण किए हए है, राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र न होगा।

व्याख्या—इस अनुच्छेद के प्रयोगन के लिए कोई व्यक्ति कोई लाभ का पद धारण किए हुए केवल इसीलिए नहीं ममका जाएगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति अथवा किसी राज्य का राज्यपाल है अथवा या तो संघ का या किसी राज्य का मंत्री है।”

10. हमें यह स्पष्ट दिखाई देता है कि अनुच्छेद 58 में किसी अध्यर्थी की पात्रता के लिए केवल अर्हताएं या शर्तें उपबन्धित हैं। इसका किसी अध्यर्थी के नामनिर्देशन से, जिसमें वस प्रस्थापक और वस समर्थक अपेक्षित हैं, कोई सम्बन्ध नहीं है। हमारा यह विचार कि भारत के राष्ट्रपति के पद जैसे उच्च पद के लिए निर्वाचित की दशा में यह शर्तें अधिकथित करता पर्याप्त युक्ति यूक्त है कि उस व्यक्ति के, जिसे अध्यर्थी के रूप में निर्वाचित में सुन्ने को इजाजत दी जाती है, सैकड़ों निर्वाचितों में से जो भी विद्यायक है, कम से कम दस प्रस्थापक और वस समर्थक होने चाहिए। हमारा यह विचार है कि धारा 5-ख और 5-ग की विधय वस्तु उपबन्धित संविधान के अनुच्छेद 71(1) के उपबन्धों के अन्तर्गत पूर्णतया आ जाती है। हमारा यह भी विचार है कि इस दसील में कोई बल नहीं है कि अधिनियम की धारा 5-ख और 5-ग संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रतिकूल हैं। धारा 5-ख और 5-ग में अधिकथित शर्तें उन सभी व्यक्तियों को बिना किसी भेदभाव के लागू होती हैं जो राष्ट्रपतीय निर्वाचन में अध्यर्थी होता आहते हैं। उनमें प्रथमदृष्ट्या किसी

ऐसे व्यक्ति द्वारा जो गंभीर रूप से राष्ट्रपतीय निर्वाचित लड़ना चाहता है, अनुपालन की जाने वाली युक्तियुक्त शर्तें अधिरोपित की गई हैं। प्रतः यह उपबन्ध संविधान के अनुच्छेद 71(3) के प्रशासा भी विधिमान्य होगा।

11. जब संविधान के अनुच्छेद 71(3) के संबन्ध में अर्जीदार को बताया गया तब उसने यह बलील दी कि वह 1974 के संशोधन द्वारा, जो अविधिमान्य था, पुरास्थापित किया गया था। जब हमने अर्जीदार से अधिकथित अविधिमान्यता के सबन्ध में प्रश्न किया, तो उसने यह उपबन्ध दिया कि उसने वह संविधान के आधारभूत ढांचे का अतिक्रमण होता है और वह दलील दी कि इस न्यायालय ने संविधान के इसी प्रकार के संशोधन को श्रीमती इन्विरा नेहरू गांधी बनाम राज भारतपरा¹ में अविधिमान्य बना दिया था। हमारा यह विचार है कि संविधानिक संशोधन या जिन उपबन्धों को उस मामले में अविधिमान्य बना दिया गया था उनके बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वे संविधान के अनुच्छेद 71(3) के समरूप हैं। श्रीमती इंदिरा नेहरू गांधी के मामले इसमें न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 329-क(4) का मुक्तयता इस प्राधार पर खंडन किया था कि उससे संविधान के आधारभूत ढांचे का अतिक्रमण होता है क्योंकि संसद् संविधान के अनुच्छेद 368 के अधीन संशोधन की प्रतीकी शक्तियों का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय के समझ लम्बित निर्वाचित विवादों के न्यायिक विवादों के न्यायिक विवादों की शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता था। उस मामले में इस न्यायालय ने एक ऐसे उपबन्ध का खंडन किया था जिसके द्वारा इस न्यायालय के समझ अपीलों में लम्बित विवादों का विनिश्चय करते की उसकी अधिकारिता छीन ली गई थी क्योंकि संसद् ने यथार्थतः इन विवादों का विनिश्चय करते के पश्चात्, इस न्यायालय को निवेदा दिया कि वह सांविधानिक संशोधन के रूप में जो कुछ अधिकथित किया गया है उसका पालन करे। इस न्यायालय ने उस शक्ति का, जो वस्तुतः संसद् के निहित केवल विद्यायी शक्ति थी, आश्रय लेकर किसी न्यायिक या न्यायिकवत् प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना उक्त बात को विधिमान्य मानने से इकार कर दिया जो न्यायनिर्णयन की कोटि में आता है या जिससे न्यायनिर्णय होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धान्त पर आधारित संविधान का आधारभूत ढांचा अनुच्छेद 329-क(4) द्वारा बुरी तरह से हिल गया था और इसलिए उसे शून्य घोषित किया गया था। हमारे समझ जो मामला है उसमें संविधान का आमेपित संशोधन केवल उस विधि के प्रति निर्देश करता है जिसके द्वारा संसद् राष्ट्रपतीय निर्वाचित से संबन्धित विषयों का, जिसके अन्तर्गत ऐसे निर्वाचित से उत्पत्त होने वाले निर्वाचित विवादों से संबन्धित विषय आते हैं। विनियमन कर सकती है। इससे यह नहीं कहा जा सकता कि इस न्यायालय के समझ लम्बित किसी विषय का विनिश्चय करते की इसकी अधिकारिता छीन ली गई है। जो कुछ भी इसके द्वारा किया गया है वह इस बात का उपबन्ध करता है कि अनुच्छेद 71(1) के अधीन आने वाली किसी विधि की मान्यता को किसी न्यायालय में प्रस्तुत नहीं किया जाएगा। कूंकि इस न्यायालय का ऐसे प्राधिकरण या अधिकरण के रूप में गठित किया गया है जिसके समझ राष्ट्रपति के निर्वाचित को प्रश्नगत किया जा सकता है इसलिए अनुच्छेद 71(3) का प्रभाव केवल ऐसे सुप्रसिद्ध सामान्य सिद्धान्त को प्रभावशील करता है जिसे इस न्यायालय द्वारा लागू किया जाता है कि किसी अधिनियमित के अधीन कार्य करने वाला या अपनी अधिकारिता का प्रयोग करने वाला कोई न्यायालय या अधिकरण उसी अधिनियमिती की विधिमान्यता को प्रश्नगत नहीं करेगा जो उसकी शक्तियों का स्रोत है। यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 71(1) के अधीन संसद् द्वारा बनाई गई विधि के अधीन गठित एक निर्वाचित अधिकरण के रूप में कार्य करता है। हमें तो अधिनियम की धारा 5-ख और न ही धारा 5-ग तथा न ही उस संशोकेन की, जिसके द्वारा संविधान का अनुच्छेद 71(3)

पुरस्थापित किया गया था, विधिमान्यता पर किए गए आक्षेप में कोई अल विचारी नहीं देता है।

12. ऊपर वर्णित उपबन्धों पर सावधानीपूर्वक हमने जो विचार किया है उसके परिणामस्वरूप हमारी यह राय है कि चूंकि राष्ट्रपतीय निवाचिन को प्रश्नगत करने की प्रक्रिया अथवा रीति अधिकाधिकता को जा चुकी है इतनिए अर्जीदार को उस प्रक्रिया के भीतर आ जाना चाहिए जिससे कि उसे राष्ट्रपतीय निवाचिन पर आक्षेप करने का अधिकार मिल सके और इस अर्जी को कायम रखने के योग्य हो सके। यदि वह अपनी अर्जी में ही अपने द्वारा किए गए प्रावधानों के आधार पर न तो अध्यर्थी है त ही होने का दावा कर सकता है, तो उसे भारत के राष्ट्रपति के रूप में श्री नीलम संजीव देहो के निवाचिन को प्रश्नगत करने का अधिकार नहीं होगा। इस न्यायालय के आदेश 39 के नियम 2 और 5 के साथ पठित अधिनियम की घारा 14(1), 14(2) और 14(3) और 14-क (1) के उपबन्ध का प्रमाण यह है कि हमारे समझ जो अर्जी है वह वर्जित है क्योंकि अर्जीदार के पास उसे कायम रखने के लिए प्रयत्नित सुने जाने का अधिकार नहीं है।

13. पूर्वगामी कारणों से हम विवाचक (1) से (4) का विनियम अर्जीदार के विरुद्ध करते हैं।

14. हम यहां यह उल्लेख कर दें कि राजस्थान राज्य बनाम भारत संघ¹ में इस न्यायालय ने प्रारम्भिक प्रश्न पर विवाचक विरचित किए बिना संविधान के अनुच्छेद 131 के अधीन हम न्यायालय में फाइल किए गए आद खारिज कर दिए थे। उस मामले हम में से एक (मुख्य न्यायालयित भेग) ने यह संकेत किया था कि उन मामलों में तकनीकी रूप से अधिक उपरित आदेश पारित करने का भलव इस न्यायालय के नियमों के आदेश 23, नियम 6 के अधीन प्रारम्भ में ही नामंजूर करना होगा।

15. लेकिन हमारे समझ जो मामला है उसमें यह विलुप्त स्थित है कि अर्जी अधिनियम की घारा 5-ब और 5-ग तथा घारा 14-क और अधिनियम की घारा 14(3) में वर्जित भाग 3 के अधीन विरचित इस न्यायालय के नियमों के आदेश 39 नियम 2 और 5 के साथ पठित घारा 14(1) और 4 के उपबन्धों द्वारा वर्जित है।

16. हम बताएं साल साहू बनाम काल्पद्रीन असी अहमद में 1974 की निवाचिन अर्जी संख्या 1 में 14 अक्टूबर, 1974 को दिए गए इस न्यायालय की सांविधानिक न्यायालय के नियम से पूर्णतया और अद्वापूर्वक सहमत हैं उस मामले में इसी अर्जीदारों द्वारा जो अब हमारे समझ इस भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री काल्पद्रीन असी अहमद के विवर संकेत में इसी प्रकार की निवाचिन अर्जी पर इस न्यायालय ने उसकी अर्जी को खारिज कर दिया था और उन आधारों को नामंजूर कर दिया था जो अब हमारे समझ दोहराएं गए हैं। उस मामले में भी अर्जीदार ने अधिनियम की घारा 5-ब और 5-ग की विधिमान्यता पर आक्षेप किया था और वह असफल रहा था। अर्जी प्रारम्भिक आक्षेप पर प्रारम्भ में ही खारिज कर दी गई थी।

17. नजीर अहमद बनाम एमपटर² में अधिकाधित सुप्रियद सिद्धान्त का अवलम्बन करते हुए यह बलपूर्वक कहा जा सकता है कि जहा किसी बात को करने का कोई कंग अधिकाधित कर दिया गया हो वहाँ कोई दूसरा दंग अपरिहायी रूप से प्रतिषिद्ध होता है, यह अर्जी निवाचिन अर्जी के फाइल किए जाने के लिए प्रक्रिया अधिकाधित करने वाले और यह उपदायित करने वाले कि उसे करने के लिए कौन हकदार है, विधि के उपबन्धों द्वारा वर्जित है। इस दृष्टि से अर्जी को इस न्यायालय के नियमों के आदेश 23, नियम 6 के अधीन नामंजूर किया जा सकता था। दूसरी ओर, यह कहा जा सकता है कि जब कि वह उन उपबन्धों की, जो उसे न्यायालय में आने से वर्जित करते हैं विधिमान्यता को ही चुनीती

(1) (1978) 1 एस०सी०आर० 1

(2) ए० आर० आर० 1936 पी०सी० 252 (2)

दे रहा है, उसे तब तक सुने जाने का अधिकार है जब तक कि उसका मामला विधिमान्यता के प्रश्न पर नामंजूर नहीं कर दिया जाता। परिणामतः हमारा यह विचार है कि हमारे समझ जो मामला है उसमें हमारे लिए यह अधिनिवार्ता रखना अधिक सुरक्षित है कि हमने जो मत अपनाया है उसके अनुसार यह अर्जी कायम रखने योग्य नहीं है।

18. तबनुसार हम यह अर्जी खारिज करते हैं किन्तु खर्च के बारे में कोई आदेश नहीं देते हैं।

हस्तां-एम० एच० वेग, मु० न्या०
हस्तां-वाह० वी० चन्द्रचूल, न्या०
हस्तां-पी० एन० भगवती, न्या०
हस्तां-वी० आर० हृष्ण घग्यर, न्या०
हस्तां-जसवन्त सिंह, न्या०
हस्तां-वी० डी० तुलजापुर्कर, न्या०
हस्तां-ही० ए० देसाई, न्या०—”

नई दिल्ली,

15 फरवरी, 1978

[सं० फा० 23(4)/78-विधा० 11)]

ई० बैंकेश्वरन, संयुक्त सचिव

MINISTRY OF LAW, JUSTICE AND COMPANY AFFAIRS

(Legislative Department)

New Delhi, the 6th May, 1978

S.O. 308(E).—In pursuance of section 20 of the Presidential and Vice-Presidential Elections Act, 1952 (31 of 1952), the Central Government hereby publishes the Order made on the 15th February, 1978, by the Supreme Court of India, in Election Petition No. 1 of 1977.

IN THE SUPREME COURT OF INDIA ORIGINAL JURISDICTION

ELECTION PETITION NO. 1 OF 1977

Charan Lal Sahu ..Petitioner.

Versus

Shri Neelam Sanjeeva Reddy ..Respondent

JUDGMENT

BEG, CJ.

This is a petition under section 14 of the Presidential and Vice-Presidential Elections Act, 1952 (hereinafter referred to as the Act), challenging the election of Shri Neelam Sanjeeva Reddy as a President of India at the Presidential election held on 19th July, 1977. Section 14 and the relevant part of section 14A of the Act read as follows:—

“14. (1) No election shall be called in question except by presenting an election petition to the authority specified in sub-section (2).

(2) The authority having jurisdiction to try an election petition shall be the Supreme Court.

(3) Every election petition shall be presented to such authority in accordance with the provisions of this Part and of the rules made by the Supreme Court under article 145.

14A. (1) An election petition calling in question an election may be presented on one or more of the grounds specified in sub-section (1) of section 18 and section 19, to the Supreme Court by any candidate at such election, or—

(i) in the case of Presidential election, by twenty or more electors joined together as petitioners.”

Among the rules made by this Court, Part VIX, Order XXXIX contains rules relating to election petitions made under Part III mentioned in section 14(3) of the Act. Rule 2 of Order XXXIX lays down :

"2. An application calling in question an election shall only be by a petition made and presented in accordance with the provisions of this Order".

Rule 5 of order XXXIX provides :

"5. The petition shall state the right of the petitioner under the Act to petition the Court and briefly set forth the facts and grounds relied on by him to sustain the reliefs claimed by him."

Rule 34 of Order XXXIX says :

"34. Subject to the provisions of this order or any special order or directions of the Court, the procedure on an election petition shall follow, as nearly as may be, the procedure in proceedings before the Court in the exercise of its original jurisdiction."

Thus, the procedure contained in Part III of the Rules of this Court, including Order XXIII relating to the institution of suits by plaints, applies to the proceedings commenced by election petitions after reading the word "petition" for "plaint". Among these rules is rule 6 which provides that this Court after the plaint has been presented to the Registrar and numbered, shall reject the plaint "Where it does not disclose a cause of action", or where "the suit appears from the statement in the plaint to be barred by any law". It is obligatory upon the Court to reject it outright and not to waste any more time upon a plaint or petition if the provisions of law are shewn to bar proceedings. Indeed, it is not even necessary to issue a notice to any opposite party or parties in such a case. But, where the petition or plaint of the petitioner is rejected, Order XXIII, rule 7 requires that "the Court shall record an order to that effect with the reason for the order".

It is only after the issue and service of summons under Order XXIV and the filing of a written statement under Order XXV that the question of framing issues need arise in a case. However, as notice was issued and an affidavit in opposition was filed by Shri Neelam Sanjeeva Reddy himself in this case where preliminary objections to the maintainability of the election petition were taken, and the petitioner asked for issues to be framed, this Court framed issues on these preliminary objections. They were as follows :

1. Has the petitioner a locus standi to maintain his election petition, or, in other words, is he a duly nominated candidate in accordance with provisions of section 5B and 5C of the Presidential and Vice-Presidential Elections Act ?
2. Is the petition maintainable ?
3. Is it open to the petitioner to challenge the validity of section 5B and 5C of the Act ?
4. If so, are the two provisions mentioned in issue No. 3 valid ?

If, however, the petitioner could not get beyond the stage of the first issue on his locus standi, it was no use considering other issues. In this case, however, the four issues or questions in issue framed above are so interconnected that we propose to deal with them by means of a single judgment and order stating our reasons for coming to the conclusion that this petition is barred by the provisions of law so that it must be rejected on this ground. We are also of opinion that it is neither open to the petitioner to challenge the validity of section 5B and 5C of the Act nor are these provisions in any way invalid. The petitioner went so far as to challenge the validity of the constitutional amendment introduced in 1974 by which the jurisdiction of any Court to question the validity of an Act made under Article 71(1) of the Constitution was barred. The relevant constitutional provisions and the provisions of the Act are set out below :

Article 54 lays down as follows :

"54. Election of President—The President shall be elected by the members of an electoral college consisting of—

- (a) The elected members of both Houses of Parliament; and
- (b) the elected members of the Legislative Assemblies of the States".

The manner of election of the President, in accordance with the system of proportional representation by means of a single transferable vote by secret ballot, is provided for by Art. 55 of the Constitution. The first three clauses of Art. 71 lay down as follows :—

"71. Matters relating to our connected with the election of a President or Vice-President—

(1) Subject to the provisions of this Constitution, Parliament may by law regulate any matter relating to or connected with the election of a President or Vice-President, including the grounds on which such election may be questioned :

Provided that the election of a person as President or Vice-President shall not be called in question on the ground of the existence of any vacancy for whatever reason among the members of the electoral college electing him.

(2) All doubts and disputes arising out of or in connection with the election of a President or Vice-President shall be inquired into and decided by such authority or body and in such manner as may be provided for by or under any law referred to in clause (1).

(3) The validity of any such law as is referred to in clause (1) and the decision of any authority or body under such law shall not be called in question in any Court."

To carry out the purpose of Art. 71(1) of the Constitution the Presidential and Vice-Presidential Election Act 1952 was enacted by Parliament. The grounds on which the election can be questioned as well as the mode of questioning it were laid down by the Act. Section 14A of the Act provides the only manner in which the election of a President can be called in question by an election petition presented to the Supreme Court either by a candidate or by 20 or more electors joined as petitioner.

Section 13(a) of the Act says :

"'Candidate' means a person who has been or claims to have been duly nominated as a candidate at an election."

The petitioner admits in his plaint that he was not duly nominated as provided by section 5B of the Act which enacts that each candidate shall "deliver to the Returning Officer" at the place specified in this behalf in the public notice issued under section 5 a nomination paper completed in the prescribed form and subscribed by the candidate as assenting to the nomination ; and

(a) in the case of Presidential election, also by at least ten electors as proposers and at least ten electors as seconds."

Again, section 5C provides that :

"A candidate shall not be deemed to be duly nominated for election unless he deposits or causes to be deposited a sum of two thousand five hundred rupees."

Now, the petitioner also admits in his petition that he had not deposited this sum of money as required by section 5C of the Act. Thus, on the very admissions in the petition or plaint, the petitioner was not a candidate either duly nominated or one who could claim to be so nominated. Hence, his nomination paper was rightly rejected by the Returning Officer acting under section 5E of the Act.

Now, the petitioner's contention is that Article 58 of the Constitution lays down the qualifications for a candidate to be elected so that a law made under Article 71(1) could not be in conflict with what is provided by Article 58 which reads as follows :

"(1) No person shall be eligible for election as President unless he—

- (a) is a citizen of India,
- (b) has completed the age of thirty-five years, and
- (c) is qualified for election as a member of the House of the People.

(2) A person shall not be eligible for election as President if he holds any office of Profit under the Government of India or Government of any State or under any local or other authority subject to the control of any of the said Governments.

Explanation.—For the purposes of this article, a person shall not be deemed to hold any office of profit by reason only that he is the President or Vice-President of the Union or the Governor of any State or is a Minister either for the Union or for any State."

It is clear to us that Article 58 only provides the qualifications or conditions for the eligibility of a candidate. It has nothing to do with the nomination of a candidate which requires ten proposers and ten seconders. We think that in the case of an election to such a high office as that of the President of India, it is quite reasonable to lay down the condition that a person who is allowed to contest the election as a candidate must have at least ten proposers and ten seconders from amongst hundreds of electors who are legislators. We think that the subject matter of section 5B and 5C is completely covered by the provisions of Article 71(1) of the Constitution set out above. We also think that there is no force in the contention that sections 5B and 5C of the Act are in conflict with Article 14 of the Constitution. The conditions laid down in sections 5B and 5C apply to all persons who want to be candidates at a Presidential election without any discrimination. They *prima facie* impose reasonable conditions to be observed by any person who wants seriously to contest at a Presidential election. Hence, this provision would be valid even apart from Article 71(3) of the Constitution.

When Article 71(3) of the Constitution was pointed out to the petitioner, he contended that it was introduced by an amendment in 1974 which was invalid. When we questioned the petitioner about the grounds of its alleged invalidity, he maintained that it constituted an invasion of the basic structure of the Constitution, and contended that this Court had invalidated a similar amendment of the Constitution in the case of Shrimati Indira Nehru Gandhi Vs. Raj Narain⁽¹⁾. We think the provisions of the Constitutional amendment which was invalidated there cannot be said to be similar to Article 71(3) of the Constitution. In Shrimati Indira Nehru Gandhi's case (*supra*), this Court had struck down Article 329A(4) of the Constitution mainly on the ground that it violated the basic structure of the Constitution inasmuch as Parliament, in exercise of its powers of amendment of the Constitution, under Article 368, could not exercise a judicial power of decision of election disputes pending before this Court. This Court had struck down a provision there which took away the jurisdiction of this Court to decide disputes pending in appeals before it, because Parliament had, after practically deciding these disputes, directed this Court to carry out whatever was laid down in the form of a Constitutional amendment. This Court refused to accept as valid what amounted to an adjudication or what displaced adjudication, without following any judicial or quasi-judicial procedure, by resorting to what

was essentially only a legislative power lodged in Parliament. The basic structure of the Constitution resting on the doctrine of a Separation of powers, seemed to have been shaken rather rudely by Article 329A(4) which was, therefore, declared void. In the case before us, the impugned amendment of the Constitution only refers to a law by which Parliament may regulate matters connected with the Presidential election, including those relating to election disputes arising out of such an election. It cannot be said to take away the jurisdiction of this Court to decide any matter which may be pending before this Court. All it does is to provide that the validity of any law falling under Article 71(1) will not be called in question in any court. Inasmuch as this Court has been constituted the authority or Tribunal before which the election of the President can be questioned the effect of Article 71(3) is only to give effect to a well known general principle which is applied by this Court that a Court or Tribunal functioning or exercising its jurisdiction under an enactment will not question the validity of that very enactment which is the source of its powers. This Court functions here as an election tribunal set up under a law made by Parliament under Article 71(1) of the Constitution. We are unable to see any force in the attack upon the validity of either section 5B or section 5C of the Act or of the amendment which introduced Article 71(3) of the Constitution.

The result of a careful consideration by us of the provisions mentioned above is that we think that, the procedure or manner for questioning the Presidential election having been laid down, the petitioner must come within the four corners of that procedure in order to have a locus standi to challenge the Presidential election and to be able to maintain this petition. If he neither is nor can claim to be a candidate, on assertions made by him in his petition itself, he would be lacking the right to question the election of Shri Neelam Sanjeeva Reddy as President of India. The effect of the provision of section 14(1), 14(2) and 14(3) and 14A(1) of the Act, read with Order XXXIX, rules 2 and 5 of the Rules of this Court, is that the petition before us is barred because the petitioner has not got the required locus standi to maintain it.

For the foregoing reasons, we decide issues (1) to (4) against the petitioner.

We may mention here that in *State of Rajasthan Vs. Union of India*⁽²⁾, this Court had dismissed suits filed in this Court under Article 131 of the Constitution on a preliminary point without framing issues. It was pointed out there, by one of us (Beg, C. J.), that technically more correct order to pass in those cases may have been to reject the plaints in limine under Order XXIII, Rule 6 of the Rules of this Court.

In the case before us, however, it is quite clear that the petition is barred by the provisions of section 14(1) and (3) read with Sections 5B and 5C and Sec. 14A of the Act and Order XXXIX, Rules 2 and 5 of the Rules of this Court framed under Part III mentioned in section 14(3) of the Act.

We are also in complete and respectful agreement with the judgment of a constitution Bench of this Court given on 14th October, 1974, on election Petition No. 1 of 1974 *Charan Lal Sahu Vs. Fakhruddin Ali Ahmed*, where, on a precisely similar election petition by the very petitioner now before us against the former President Shri Fakhruddin Ali Ahmed, this Court had dismissed his petition and rejected the very grounds

(1) (1976) 2 SCR 347.

(2) (1978) 1 SCR p. 1.

now repeated before us. In that case also the petitioner had assailed the validity of Sections 5B and 5C of the Act and failed. The petition was dismissed in limine on a preliminary objection.

It could be urged relying upon the well known principle laid down in Nazir Ahmed Vs. Emperor (1936) A.I.R. P.C. 256(2) that, where a mode for doing something is laid down, any other mode is necessarily prohibited, this petition is barred by the provisions of law laying down the procedure for filing an election petition and indicating who are entitled to maintain it. On such a view the petition could be rejected under Order XXIII Rule 6 of the Rules of the Court. On the other hand, it could be said, where he is challenging the very validity of the provisions which bar him from coming to the Court, that he has the locus standi to do that until his case is thrown out on the question of validity. Consequently, we think it safer in the case before us to hold that the petition is not maintainable on the view taken by us.

Accordingly, we dismiss this petition but make no order as to costs.

Sd/- M. H. Beg, C.J.

Sd/- Y. V. Chandrachud, J.

Sd/- P. N. Bhagwat, J.

Sd/- V. K. Krishna Iyer, J.

Sd/- Jaswant Singh, J.

Sd/- V. D. Tulzapurkar, J.

Sd/- D. A. Desai J."

New Delhi,
15th February, 1978.

[No. F. 23(4)/78-Leg. II]

E. VENKATESWARAN, Jt. Secy.

